ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2016; 2(1): 67-70
www.allresearchjournal.com
Received: 18-11-2015
Accepted: 21-12-2015

डॉ० मधु कान्त झा
सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग मिथिला महिला महाविद्यालय, आजमनगर दरभंगा, बिहार, भारत।

Corresponding Author:
डॉ० मधु कान्त झा
सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग मिथिला महिला महाविद्यालय,
आजमनगर दरभंगा, बिहार, भारत।

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन की प्रासंगिकता का अध्ययन

डॉ० मधु कान्त झा

DOI: https://doi.org/10.22271/allresearch.2016.v2.i1a.7478

सारांश
स्वामी विवेकानन्द भारत के बहुमूल्य रत्न एक जीवित क्रांति के मिशाल थे, एक व्यक्ति नही एक चमत्कार थे। आज से प्रायः एक सदी पहले पराधीन और पददलित भारत के जिस एकाकी और अंकिचन योद्धा संयासी ने हजारों मील दूर विदेश में नितांत अपरिचितों के बीच अपनी ओजमयी वाणी में भारतीय धर्म साधना के चिरंतन सत्यों का जयघोष किया। स्वामी विवेकानन्द सामायिक भारत में उन कुशल शिल्पियों में हैं जिन्होने आधाराभूत भारतीय जीवन मूल्यों की आधुनिक अंतराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में विवेक संगत व्याख्या की। स्वामी विवेकानन्द के जीवन कोश में भारतीय नव निर्माण के उर्वर बीच यत्नपूर्वक संकलित है ही, उसमें पीड़ित और जर्जरित मानवता के पुनर्सृजन की कार्यात्मक कार्यसाधन योजना भी सम्मिलित है।
भारत के लिए स्वामी जी के विचार चिंतन और संदेश प्रत्येक भारतीय के लिए अमूल्य धरोहर है तथा उनके जीवन शैली और आदर्श प्रत्यके युवा पीढ़ी के लिए प्रेरणास्त्रोत हैं। स्वामी विवेकानंद ने अपने जीवन का प्रावाधान लक्ष्य भारत के स्वामी जी भारतीय संस्कृति शिक्षा तथा धर्म के समग्रता के संबंध ने आज हमारे सामने विशेषकर युवा पीढ़ी के लिए यह आह्वान कि "मानव स्वाभाव गौरव को कभी मत भूलो । हममें से प्रत्येक व्यक्ति यह घोषणा करें कि मैं ही ईश्वर हूँ जिससे बड़ा कोई न हुआ है और न ही होगा। उनके विचारानुसार शिक्षा का उद्देश्य केवल जानकारी देना मात्र नही है अपितु उसका लक्ष्य जीवन चरित्र और मानव का निर्माण करना होता है। चूंकि वर्तमान शिक्षा उन तत्वोंसे युक्त नही है अतः वह श्रेष्ठ शिक्षा नही है। वे शिक्षा के वर्तमान रूप को अभावात्मक बताते थे जिसमें विद्यार्थियों को अपनी संस्कृति का ज्ञान नही होता। भारत की गुरू शिष्य परंपरा जिसमें विद्यार्थियों तथा शिक्षकों में निकटता के संबंध नया संपर्क रह सकें तथा विद्यार्थियों में पवित्रता ज्ञान, धैर्य, विश्वास, विनम्रता आदि के श्रेष्ठ गुणों का विकास हो सके। वे धर्म के संबंध में किसी एक धर्म को प्रािमिकता नही देते थे, स्वामी जी मानव धर्म के प्रति दृढ़ प्रतिज्ञ थे। उन्होने धार्मिक संकीर्णता से ऊपर उठते हुए यह घोषणा की प्रत्येक धर्म, सम्प्रदाय जिस भाव में ईश्वर की आराधना करता है, मैं उनमे से प्रत्येक यके साथ ठीक उसी भाव से आराधन करूंगा। स्वामी जी के अनुसार बाईबिल, वेद, गीता, कुरान तथा अन्य धर्मग्रंथ समूह मानों ईश्वर के पुस्तक में के एक–एक पृष्ठ है। वे प्रत्येक धर्म को महत्व देते थे तथा उनके सारभूत तत्वों को जो मानव जीवन को उनका चरित्र तथा ज्योति प्रदान करने में सक्षम हो को अपनाने का आहवान करते थे जिसे एक नाम दिया गया "सर्व धर्म सम्भाव"। उन्होंने प्रत्येक धर्म के विषय में कहा कि कोई व्यक्ति जन्म से हिन्दू, ईसाई, मुस्लिम, सिक्ख या अन्य धर्म के नहीं होते। उनके अपने माता पिता, पूर्वज जिस संस्कृतिक संस्कार या परंपर से जुड़े रहते है। वे उसे सीखते और आज्ञा पालन करने वाले होते हैं। मानव से बढ़कर और कोई सेवा श्रेष्ठ नही है और यहीं से शुरू होता है वास्तविक मानव की जीवन यात्रा। हमें आज आवश्यकता है स्वामी जी के आदर्शों पर चलने हेतु दृढ़ प्रतिज्ञ होने, उनके शिक्षा विचार संदेश तथा दर्शन को साकार रूप में अपना लेने की। स्वामी जी के जीवन शैली को आत्मसात करके जन जन में एकता प्रेम और दया की नदियाँ बहाकर नए युक की शुरूआत करने की। तो आईये जाति, धर्म, सम्प्रदाय, पंथ और अन्य संकीर्ण मानसिकता से ऊपर उठकर एक दूसरे का हाथ थामकर माँ भारती को समृद्धि, विकास और उपलब्धि की ओर ले जाए।

प्रस्तावनाः
विश्व में प्रकृति के नियमानुसार सर्वदा से उत्थान के लिए प्रयत्न किये जाते रहे है जिसके फलस्वरूप में महान विभूतियों ने जन्म लिया और आदिकाल से आधुनिक काल तक उनका आविर्भाव हुआ है। भारत की भूमि में भी समय–समय पर महापुरूषों का अविर्भाव हुआ है और उन्होंने अपने प्रयत्नों से भारत की ललाट ऊँचा किया। महात्मा बुद्ध, आचार्य शंकर, दयानन्द महात्मा गाँधी, स्वमी विवेकानन्द महर्षि अरविनद आदि अन्यानय महापुरूषों ने अपने–अपने ढ़ग से मानव का पथ–प्रदर्श किया है और जीवन को विभिन्न दिशाओं में प्रगतिशील बनाया है। किसी भी देश की अपेक्षा, भारत ने आध्यात्मिक संस्कृति के सबसे अधिक इन स्तम्भों को उत्पन्न किया है। भारत का गगनमण्डल सैव इस प्रकार के प्रकाशमय पुन्जों से जगमगाता रहा भारततभूमि में ऐसे महापुरूषों का अवतार हुआ है

और समय–समय पर होता रहता है जो उसकी संस्कृति निधि में अपना आध्यात्मिक योगदान देकर मानवता की रक्षा करते हैं। ऐसे महापुरूषों में स्वामी विवेकानन्द भी एक थे। भारत के सम्याहत संस्कृति दाय को प्रकट करने वाला अन्तिम व्यक्ति एक सौ तीस साल के कुछ पहले उत्पन्न हुआ था। अपनी मृत्यु के पचास पर्श के भीतर उसका प्रभाव संसार के सभी सभ्य देशों में फैल गया और उसकी जन्मभूमि के बाहर के लाखों लोगों के लिए उनका जीवन प्रेरणा स्त्रोत बना। पिछले तीन हजार वर्षों की भारत की आध्यात्मिक संस्कृति उनके द्वारा अवतरित हुई और तीस करेड़ हिन्दुओ की आध्यात्मिक संस्कृति उनके द्वारा अवतरित हुई और तीस करोड़ हिन्दुओं की आध्यात्मिक उत्कंठा उसके अनुभवों और शब्दों द्वारा अभिव्यक्त हुई, ऐसे महापुरूष स्वामी विवेकानन्द ही थे, जिन्होने अमेरिका, यूरोप और इंग्लैण्ड के क्षेत्रों में जाकर भारत के आध्यात्मिक ज्ञान को ऐसा विकीर्ण किया कि उसके प्रकाश से सारा जग ज्योर्तिमय हो उठा। धर्म और आध्यात्म का उन्होंने ऐसा प्रचार किया कि सारे विश्व में आज उनके सम्प्रदाय के केन्द्र स्थापित हो गये है, जो मानवता की सेवा करते हैं और मानव को गर्त से ऊपर उठा रहे हैं। ऐसे महापुरूष के उपदेश एवं उनकी शिक्षा से मानवता जब इतना प्रभावित हुई है तो हमें भी उनके शिक्षा दर्शन एवं दार्शनिक विचारों से अवगत होना चाहिए।

जन्म लेने के बाद से ही प्राणी को विभिन्न परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है और वह विकासोन्मुख होता हुआ आगे मढ़ता है। इस प्रतिक्रिया में वह अनुभव ग्रहण करता है और इस अनुभव ग्रहण में ही उसकी शिक्षा निहित है। वास्तव में मनुष्य के जीवन में शिक्षा का वही महत्व है जो पेड़–पोधों के लिए कृषि का होता है, मानव एक सामाजिक प्राणी है और समाज के जीवन में उसकी देन बहुत होती है। वही समाज का निर्माता एवं संरक्षक होता है। यही कारण है कि मनुष्य के जवीन में एवं समाज के जीवन में शिक्षा एक प्रकार का पौष्टिक पदार्थ एवं भोज्य है जिसके द्वारा शक्ति एवं बल मिलता है। फलस्वरूप मनुष्य एवं समाज दोनों आगे बढते हैं। जन्म के समय शिशु निर्बल एवं पराश्रित होता है, शिक्षा से ही शक्ति मिलती है तथा उसकी पराश्रितता दूर होती है। शिशु बड़ा होकर समाज का उपयोगी सदस्य शिक्षा द्वारा ही बनता है तथा समाज के सभी कार्यों में भाग लेता है। प्राचीन काल में भी, शिक्षा की उपादेयता, आवश्यकता एवं महत्ता स्वीकार की गयी थी। शिक्षा एक वेदाड़ग थी और जवीन के लिए अत्यन्त आवश्यक थी, यही कारण है कि शिक्षा के ऊपर सभी लोगों का ध्यान था तथा साधारण जनता से लेकर बड़े–बड़े दार्शनिक एवं राजकीय पुरूष भी इस पर विचार करते रहे। प्राचीन काल से भारत सिद्ध पुरूषों एवं युग निर्माताओं का देश रहा है। स्वामी विवेकानन्द भी उनमें से एक थे जिन्होनें संसार को एक नवीन दिशा प्रदान की स्वामी विवेकानन्द का भारतीय शिक्षा के क्षेत्र में महान रचनात्मक योगदान रहा है। उनकी शिक्षा वाग्मिता तथा अपूर्व व्यक्तित्व ने हमारी हिन्दु सभ्यता का नया अध्याय खोल दिया है। सचमुच भारतीय ज्ञान एवं भरतीय संस्कृति को स्वामीजी ने जिस प्रकार सुन्दर ढ़ंग से व्यक्त किया है कोई दूसरा वक्ता वैसा नहीं कर सकता है। इसी कारण उन्हें भारत के "अमृत पुत्र" तथा हिन्दू धर्म के सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधि' के रूप में ख्याति मिली है। गुरूदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर ने स्वामीजी की प्रशसा में रोमां रोलां से कहा था कि अगर तुम भारत के विषय में जानना चाहते हो तो विवेकानन्द का अध्ययन करों, उनमें सब कुछ धनात्मक है और ऋणात्मक कुछ भी नहीं। पण्डित जवाहर नेहरू ने भी स्वामी जी के विषय में लिखा है कि "भारत के विरासत पर गर्व करते हुए और अतीत की सम्पदा पर जड़ जमाये हुए भी विवेकानन्द का जीवन के समस्याओं के प्रति आधुनिक दृष्टिकोण तथा वे भूतकालीन और वर्तमानकालीन भारत के बीच एक सेतु सदृश्य थे।

स्वामी विवेकानन्द जी के नस–नस भारतीयता एवं आध्यात्मिक कूट–कूट कर भरी हुई थी। अतः उनके शिक्षा दर्शन का आधार भी भारतीय वेदान्त तथा उपनिषद ही रहे। वे कहते थे कि प्रत्येक प्राणी में आत्मा विराजमान है। इस आत्मा को पहचानना ही धर्म है। स्वामीजी का महान अटल विश्वास था सभी प्रकार का सामान्य तथा आध्यात्मिक ज्ञान मनुष्य के मन में है। अभी तक इसकी खोज नहीं हो पायी है। यह ढ़का ही रह गया है। परन्तु जब इस पर पड़ा हुआ आवरण उतार दिया जाता है तो हम कहने लगते हैं कि हमसीख रहे हैं। स्वामी विवेकानन्द जी एक महान दार्शनिक थे और दार्शनिक होने के नाते उन्होंने उपने दर्शन के अनुकूल, क्षैक्षिक विचार प्रस्तुत किये हैं इन्हीं शैक्षिक विचारों के कारण इनकी गणना महान शिक्षाशास्त्रियों में की जाती है। उन्होंने अपने काल की शिक्षा का विरोध किया और उसे निषेधात्मक एवं भावात्मक बताया। स्वामी जी ने कहा कि पाठशालाओं में दी जाने वाली शिक्षा की आवश्यकता है जिसमें चरित्र गठन हो, मानसिक वीर्य बढ़े, बुद्धि का विकास हो और व्यक्ति अपने पैरों पर खड़ा हो और जो भावों एवं विचारों को आत्मासात कराये। स्वामीजी के वेदान्त दर्शन में सभी प्रकार के धार्मिक विचार निहित हैं। उनका वेदान्त दर्शन ईश्वरकृत है। इसी कारण इस पर किसी वैयक्तिता की तनिक भी छाप नहीं मिलती। जो ज्ञान यथार्थ या वास्तविकता की ओर लेजाता है, वही वेदान्त है। वेदान्त का अभिप्राय जीवन और जगत के सम्बन्ध में इस अन्तिम सत्य और ज्ञान की प्राप्ति है जिसे व्यक्ति जन्म के सम्बन्ध में इस अन्तिम सत्य और ज्ञान की प्राप्ति है जिसे व्यक्ति जन्म से मृत्यु के बन्धन कटते हैं अर्थात् मोक्ष मिलता है। स्वामी विवेकानन्द जी ने ईश्वर, आत्मा, जगत, मानव, माया, पुनर्जन्म, सत्य ज्ञान, धर्म, आध्यात्मिकता आदि पर अपने विचार बड़े ही वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किये हैं।

प्रस्तुत शोध कार्य के निम्नवत् उद्देश्य हैंः–

1. अव्यवस्थित एवं अव्यावहारिक भारतीय शिक्षा व्यवस्था को समुचित स्वरूप प्रदान करने हेतु एक नवीन शिक्षा दर्शन (वेदान्त–दर्शन) का आलोचनात्मक अध्ययन करना।
2. शिक्षा दार्शनिकों की परम्परा में स्वामीजी के स्थान का निर्धारण करना।

शोध विधि

इस अध्ययन में विवेकानन्द जी के दर्शन सम्बन्धी विचारों की समीक्षा की गयी है किसी भी शिक्षा शास्त्री के विचारों पर उसके जवीन की घटनाओं एवं परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है अतः स्वामी विवेकानन्द जी के जीवन की प्रमुख घटनाओं एवं उनके कार्यों का सबसे पहले विश्लेषण किया गया हैं दर्शन सम्बन्धी विचारों को अध्ययन करने की एक विधि ऐतिहासिक विधि है जिसमें इतिहास की पद्धति अपनायी जाती है। इस पद्धति में व्यक्ति के जीवन की प्रमुख घटनाओं को देखा जाता है और उन घटनाओं के पारस्पारिक सम्बन्धों का विश्लेषण किया जाता है।

जीवन–वृतान्त

महान तेजस्वी, महामहिमान्वित आत्मा, हिन्दू दार्शनिक, ब्रह्मचारी, साुधुस्वामी, भारत के अमर विभूति विश्वविख्यात स्वामी विवेकानन्द का जन्म 12 जनवरी, 1863 ई. को कलकत्ता महानगरी के शिमला मुहल्ले के एक बंगाली क्षत्रिय परिवार में हुआ था। इनके पिता श्री विश्वनाथ दत्त कलकत्ता के उच्च नयायालय में एक प्रसिद्ध वकील थे। स्वामी विवेकानन्द अपनी माँ श्रीमती भुवनेश्वरी देवी के प्रथम पुत्र थे। इनके बचपन का नाम नरेन्द्र नाथ दत्त था। स्वामीजी 16 वर्ष की अवस्था में हाईस्कूल प्रथम श्रेणी में पास किया। हाईस्कूल पास करने के बाद उन्होंने प्रेसीडेन्सी कालेज में प्रवेश लिया परन्तु बाद में जनरल एसेम्बलीज इन्स्टीटयूशन में अध्ययन करने लगे। इनका पारिवारिक वातावरण धार्मिक था। इसलिए इन्हें बाल्यावस्था से ही धर्म, कर्म, पूजा–पाठ तथा धार्मिक ग्रन्थों के अध्ययन से रूचि उत्पन्न हो गयी।

नरेन्द्र नाथ के आध्यात्मि जीवन के विकास में उनके विद्यालय के प्रचार्य डब्ल्यू. डब्ल्यू हेस्टी का विशेष योगदान रहा। सन् 1884 में इन्होंने बी. ए. की उपाधि प्राप्त की तथा स्वामीजी का सत्संग लाभ भी करते रहे। जब इन्होंने बी.ए. की उपाधि प्राप्त किये उसी बीच इनके पिता का स्वर्गवास हो गया। जिससे इनके ऊपर पारिवारिक जिम्मेदारी बढ़ गयी। ये स्वामी रामकृष्ण परमहंस के शिष्य भी बन चुके थे। अतः स्वामीजी ने माँ काली की कृपा से इनका संकट दूर किया। फिर भी इन्हें परिवार तथा रिश्ते–नाते के लोगों ने इनका साथ छोड़ दिया। स्वामी विवेकानन्द जी के ऊपर इन बातों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इसी बीच स्वामीजी ने नरेन्द्र नाथ के साथ दस शिष्यों को दीक्षित किया और अपना उत्तराधिकार नरेन्द्रनाथ को सौंप दिया। दीक्षित होने पर ही नरेन्द्रनाथ विवेकानन्द कहलाये। महाप्रस्थान के तीन दिन पूर्व ही उन्होंने नरेन्द्र नाथ को अपना उत्तराधिकारी घोषित करते हुए कहा था कि "आज अपना सब मैं तुम्हें देकर रंक बन गया हूँ। मैने योग द्वारा जिस शक्ति को तुमारे अन्दर प्रविष्ट किया है, उससे तुम अपने जीवन में महान कार्य करोगे। अपने इस कार्य को पूर्ण करने के बाद ही तूम वहाँ जाओगे जहाँ से आये हो।" नरेन्द्रनाथ ने इसे स्वीकार किया और स्वामी विवेकानन्द के रूप में अपने गुरू के उपदेशों को अपने जीवन में आजीवन उतारा तथा विश्वभर में प्रसारित भी किया।

स्वामी विवेकानन्द ने अपने गुरू की स्मृति में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की तथा उनके द्वारा दिये गये वेदान्त के उपदेशों को एशिया, यूरोप तथा अमेरिका की जनता में आजीवन प्रचार किया। स्वामी विवेकानन्द ने अपने उपदेशों के साथ–साथ यह क्रियात्मक रूप से सिद्ध कर दिया कि यदि उनके परम पूज्य गुरू के अनुभवों के अनुसार प्राचीन वेदान्त की व्यवस्था करके उसे वर्तमान जीवन से सम्बन्धित कर दिया जाय तो भारत माता की प्रथ्येक समस्या आसानी से सुलझ सकती है। रामकृष्ण परमहंस की मृत्यु के पश्चात् विवेकानन्द जी ने हावड़ा के निकट बेलूर मठ में रामकुष्ण मिशन के मुख्य कार्यालय की स्थापना की और इसे "आत्मनोमोक्षार्थ जगद्व्तिाय च" का उच्च आदर्श दिया। आज लगभग देश–विदेशों में इस प्रकार की छोटी–बड़ी 150 संस्थाये कार्य कर रही है। संक्षेप में स्वामीजी ने पाश्चात्य देशों में भावात्मक तथा भारत में क्रियात्मक वेदान्त का प्रचार करके हिन्दू धर्म की महानता को फैलाया। सन् 1886 से 1902 ई. तक सारे विश्व में अपने गुरूदेव के उपदेशों को प्रचारित एवं प्रसारित करते हुए स्वामी विवेकानन्द जी 4 जुलाई सन् 1902 ई. को परमात्मा में लीन हो गये।

दार्शनिक विचारधारा

स्वामी विवेकानन्द भारत के ज्ञान रत्न भंडार, वेदों और उपनिषदों के रहस्योद्घाटकर्ता और भाष्यकार के रूप में मान्य हैं। स्वामी जी के जीवन में वेदान्त दर्शन नव्य वेदान्त की स्पष्ट छाप दृष्टिगोचर होती है। वे वेदानत दर्शन के अनुयायी थे और वे वेदानत को सर्वोच्च दर्शन एवं सर्वोच्च धर्म मानते थे। वे अद्वैत वेदानत के पक्के समर्थक थे। वे द्वैत, विशिष्ट द्वैत तथा अद्वैत में कोई अन्तर नहीं थे। वे सभी भारतीय दार्शनिक सम्प्रदायों को वेदान्त दर्शन के अन्तर्गत मानते हैं। उन्होंने वेदान्त की विशेषता के सम्बन्ध में लिखा है कि एकम् सदविप्रा बहुधा वदन्ति, उतिष्ठत, जाग्रत, प्राप्वॅरान्निवोधात, समं पश्यन हि सर्वत्र, समवस्थितभीश्वरम्, नहि नस्त्यात्मनं ततो याति परांगतिः भिन्नता में एकता, द्वैतवाद की अपेक्षा अद्वैतवाद का समर्थन, आत्म विश्वास ही उन्नति का कारण, द्वैतभावनावादी अविद्या आदि। सृष्टि के सम्बन्ध में उनका कहना है कि –सृष्टि के सूत्रपात के समय आकाश अव्यक्त और स्थिर रहता है बाद में आदि शक्ति का प्रभाव आकाश पर पड़ता है परिणामतः वह क्रियाशील होने लगता हैं क्रियाशील होने पर मनुष्य पेड़–पौधे, नक्षत्र और पशु आदि का जन्म होता है। ईश्वर को साकार एवं निराकार, दोनों रूपों में मानते है। तथा "ऊ" को ब्रह्म मानते हैं। स्वामी जी के अनुसार मानव सेवा और ईश्वर पूजा, मनुष्यत्व और धर्म, सत्यनिष्ठता और आध्यात्मिकता में कोई भेद नहीं है। उन्होंने ब्रह्म की प्राप्ति के लिए कर्मयोग, भक्तियोग, राजयोग तथा ज्ञानयोग को प्रमुख माना हैं। धर्म के सम्बन्ध में उनका कहना है कि धर्म वह तथ्य हैः जिससे पशु मनुष्य तक और मनुष्य परमात्मा तक उठ सकता है। प्रत्येक जीव की भलाई करना ही धर्म है। पुनर्जन्म के सम्बन्ध में उनका विचार है कि वर्तमान अस्तित्व को समझने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि उसके अतीत एवं भवष्यि पर विचार किया जाय। एकेश्वरवाद में विश्वास रखते हुए स्वामीजी का कहना है कि सभी देवता एक ही परमेश्वर के रूप हैं। उन्होंने प्राचीन वेदान्त दर्शन में नव्य वेदान्त दर्शन का रूप दिया। स्वामीजी वेदान्त उवं विज्ञान दोनों को समान सिद्धान्त का मानते हैं। वे प्रेम, सत्य एवं ईश्वर को एक ही मानते हैं। स्वर्ग एवं नरक के सम्बन्ध में उनका मानना था कि कहीं स्वर्ग है तो कहीं नरक भी। ईश्वर, जगत और माया के विषय में कहते हैं कि ब्रह्म (ईश्वर) जगत का कारण है और जगत इसका कारण है। ईश्वर की बीज शक्ति का नाम माया है माया परमेश्वर (ईश्वर) की अव्यक्त शक्ति है। माया सत् का नाम माया है माया परमेश्वर (ईश्वर) की अव्यक्त शक्ति है। माया सत् भी नहीं है, असत् भी नहीं। वह केवल अद्भूत एवं अनिर्वचनीय है।

आत्मा अजर और अमर है तथा वह पूर्ण निरपेक्ष होती है। अतः जब आत्मा पूर्ण व निरपेक्ष हो जाती है तब वह ब्रह्म के साथ एक हो जाती है तथा ईश्वर को अपने स्वरूप की पूर्णता सत्यता और सत्ता के रूप में परम्सत् परमचित्त, परमानन्द के रूप में प्रत्यक्ष करती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वामी विवेकानन्द में आदर्शवादी प्रकृतिवादी एवं यथार्थवादी दर्शन के गुण विद्यमान थे आदर्शवादी होता है। प्रकृतिवादी विचारक मनोवैज्ञानिक ढ़ंग से शिक्षा देने की बात करते हैं। इस दृष्टि स`स्वामी विवेकानन्द प्रकृतिवादी थे। स्वामी जी यथार्थवादी विचारों से युक्त थे। इनका कहना था कि जिस शिक्षा से बालक अपना जीवन निर्वाह कर सके, मनुष्य बन सके, वही वास्तव में शिक्षा कहलाने योग्य है। स्वामी जी कहते थे कि आज हमें आवश्यकता है वेदान्त युक्त पाश्चात्य विज्ञान की ब्रह्मचर्य के आदर्श, श्रद्धा और विश्वास की अर्थात् वे शिक्षा के पाठ्यक्रम में वैज्ञानिक, औद्योगिक और तकनीकी विषयों को स्थान देने के पक्ष में थे। इस प्रकार वे प्रयोजनवादी दर्शन से प्रभावित दिखायी देते हैं। वे पक्के समाजवादी चिन्तक भी थे, वे कहते थे कि मैं समाजवादी हूँ, मैं समाज के सभी व्यक्तियों को धन, विद्या और ज्ञान का उपार्जन करने के लिए समान अवसर दिये जाने के पक्ष में हूँ।

स्वामी जी के उक्त विचारों से स्पष्ट होता है कि वे सम्पूर्ण मानवता को ईश्वर का रूप समझते थे। उनकी सेवा करना अपना कर्तव्य मानते थे। इन्हीं विचारों से प्रभावित होकर उन्होंने मानव की सेवा हेतु रामकृष्ण मिशन अर्थात् वेदान्त सोसाइटी की स्थापना विश्व के अनेक देशों एवं शहरों में की, जो आज भी मानव की सेवा में अस्पतालों, विद्यालयों, महाविद्यालयों, अनाथालयों आदि के रूप में कार्यरत हैं।

परिणाम एवं निष्कर्ष

स्वामी जी अपने देशवासियों की अज्ञानता और निर्धनता, इन दो से बहुत चिन्तित थे और इसे दूर करने के लिए इन्होंने शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया। शिक्षण प्रक्रिया का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जिस पर स्वामीजी की दृष्टि न पड़ी हो। स्वामी जी का मानना है कि ज्ञान मनुष्य में स्वभाव सिद्ध है, कोई भी ज्ञान बाहर से नहीं आता, सब अनदर ही है। समस्त ज्ञान चाहे वह लौकिक हो या आध्यात्मिक, मनुष्य के मन में है। इसका आवरण ज्यों–ज्यों हटता जाता है, त्यों–त्यों हमारे ज्ञान की वृद्धि होती जाती है। जिस व्यक्ति से यह आवरण हट जाता है उसे ज्ञानी और जिस

पर यह पड़ा हुआ है उसे अज्ञानी कहते हैं। इसी संदर्भ में स्वामी जी ने कहा कि–"मनुष्य की आनतर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।"

यदि हम शिक्षा सम्बन्धी स्वामी जी के सम्प्रत्यय को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखें तो यह स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि शिक्षा मनोविज्ञान के अभ्युदय के पश्चात शिक्षा सम्बन्धी जो संकल्पना आज उभर कर आयी है, वह स्वामी जी के विचारों के पूर्णतः अनुकूल है। स्वामीजी ने मनुष्य के भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिए शिक्षा को ज्ञान एवं कौशल के रूप में स्वीकार किया है, इसे ही वर्तमान शिक्षा प्रणली में ज्ञान एवं कौशल के रूप में ही देखा जा सकता है। आज भी शिक्षा अन्तर्निहित शक्ति के रूप में जानी जा रही है। स्वामी जी की शिक्षा का आदर्श है–पूर्ण मानव का निर्माण। इस पूर्णता हेतु वे मनुष्य के भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार के विकास पर समान बल देते थे। इन दोनों प्रकार के विकास के लिए स्वमी जी ने शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण किये। जैसे लौकिक उद्देश्य के अन्तर्गत–व्यक्तित्व, शारीरिक, चारित्रिक, आत्म विश्वास, आत्मरक्षा, मानसिक सांस्कृतिक, मानव निर्माण, व्यावसासिक एवं धार्मिक शिक्षा के उद्देश्य तथा आध्यात्मिक उद्देश्य। यदि हम स्वामी जी द्वारा बताये गये शिक्षा में सभी उद्देश्यों का गहनता से अध्ययन करते हैं तो वर्तमान भारतीय शिक्षा में सभी उद्देश्य सम्मिलित हैं। क्योंकि सभी शिक्षा शास्त्रियों के अनुसार शिक्षा का अन्तिम उद्देश्य व्यक्ति का निर्माण करना चाहिए। इस कटौती पर स्वामी जी के शैक्षिक उद्देश्य खरे उतरते है।

स्वामी जी शिक्षा द्वारा व्यक्ति के भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों विकास पर समान बल देते थे। इसलिए इसी के अनुरूप पाठ्यक्रम के दो प्रकार बताये। लौकिक या भौतिक तथा आध्यात्मिक। लौकिक पाठ्यक्रम के अन्तर्गत, कला संगीत, इतिहास, संगीत, इतिहास, भूगोल, खेल, राजनीति, आर्थशास्त्र, गणित और विज्ञान, धर्म–दर्शन एवं तकनीकी शिक्षा तथा आध्यात्मिक विषयों के अन्तर्गत, धर्म एवं दर्शन (वेद, वेदान्त और उपनिषद), गीता, पुराण, भागवत्, नीतिशास्त्र, कीर्तन, भजन, सत्संग एवं ध्यान। इन पाठ्यक्रमों को यदि हम वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखते हैं तो ऐसा लगता है स्वामी जी की शिक्षा आज हमारे लिए आदर्श एवं मार्गदर्शन का कार्य कर रही है। माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक विषयों का समावेश, वैज्ञानिक विषयों की अधिकता तथा नैतिक शिक्षा आज हमारे लिए आदर्श एवं मार्गदर्शन का कार्य कर रही है। आध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक विषयों का समावेश, वैज्ञानिक विषयों की अधिकता तथा नैतिक शिक्षा आज हमारे शैक्षिक पाठ्यक्रम के अभिन्न स्तरों पर निर्धारित आज का पाठ्यक्रम स्वामी जी के विचारों की आंशिक पूर्ति करता हैं जैसे विज्ञान एवं व्यावसासिक विषयों की अधिकता किन्तु आध्यात्मिक पक्ष की पूर्णतया अनेदेखीकर रहा हैं विविध प्रकार के ज्ञानार्जन हेतु स्वामीजी ने आधूनिक मनोवैज्ञानिक शिक्षण विधियों के प्रयोग का सुझाव दिया। एकाग्रता को प्रमुख शिक्षण विधि के रूप में बताते हुए उन्होंने प्रायोगिक, स्वाध्याय, मनन एवं चिन्तन व्याख्यान, वाद–विवाद, प्रश्नोत्तर, पर्यटन, कहानी, तुलनात्मक, वर्णनात्मक, विश्लेष्णात्मक, चर्चा, मौन, आदि शिक्षण विधयों को उपयोगी बताया। स्वामी जी द्वारा बतायी गयी योग विधि सर्वोत्तम विधि है परन्तु वर्तमान परिस्थितियों में उसी रूप में प्रयोग करना सम्भव नहीं है, मौन शिक्षण विधि आज के इस युग में सर्वथा अनुपयोगी है। जबकि अन्य प्रगतिशील एवं आधुनिक शिक्षण विधियों का प्रयोग आज अनिवार्य रूप से शिक्षालयों में किया जा रहा है।

स्वामी जी ने गुरू को आवश्यक ही नहीं अनिवार्य बताया है, वे गुरू–गृह प्रणाली के समर्थक थे। उनके अनुसार शिक्षकों को बल मनोविज्ञान के साथ ही भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार का ज्ञान होना चाहिए। स्वामी जी ने कहा कि जिस व्यक्ति की आत्मा में यह शक्ति संचारित होती है, उस शिष्य कहते हैं। वे ऐसे गुरूओं के पक्ष में थे जिनके जीवन का सिद्धान्त–'आत्मनोमोक्षार्थ जगद्वितायं च' हो। इस प्राकर स्वामीजी शिक्षक के प्राचीन और अर्वाचीन दोनों स्वरूपों के समर्थक थे यदि हम वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखे तो स्वामीजी ने जिन गुणों की अपेक्षा शिक्षक के लिए निर्धारित किये हैं, आज हम आदर्श रूप से इन विशेषताओं सें युक्त शिक्षक की कल्पना भले ही कर ले, लेकिन आज के गुरू चाहे जिस क्षेत्र के हों, सभी विशेषताएँ खोजने पर नहीं मिलेंगी। स्वामी जी ने प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक के किसी भी शिक्षक की न तो योग्यता निर्धारित किये और न ही वेतन, जबकि आज हर स्तर पर योग्यताएँ एवं वेतन निर्धारित हैं। आज का शिक्षक तो पूर्णतया अर्थोंपार्जन की क्रिया पर विश्वास करता है।

स्वामी जी के अनुसार भौतिक एवं आध्यात्मिक किसी भी प्रकार के ज्ञान के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षार्थी ब्रह्मचर्य का पालन करें और शिक्षक के सानिध्य में रहकर ज्ञानार्जन करें। वे गुरूकुल प्रथा की प्रशंसा करते हुए एक सच्चे शिक्षार्थी में सच्ची ज्ञान पिपासा गुरू के प्रति विश्वास, नम्रता, श्रद्धा और सहानुभूति की भावना, ब्रह्मचर्य, सहनशक्ति, धैर्य, मुक्त होने की तीव्र आकाँक्षा, परिश्रम, शारीरिक सुदृढ़ता एवं चरित्र की पवित्रता आदि गुण होने चाहिए। मोक्ष की कामना से ससस‌त्य को जानने की आकाँक्षा वाले शिष्य को आध्यात्मिक एवं जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विज्ञान, तकनीकी एवं औद्योगिक शिक्षा प्राप्त करने वाले को लौकिक वर्ग का शिष्य स्वामी जी ने बताया। इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वामीजी के शिष्य सम्बन्धी विचार उच्च कोटि के हैं। स्वामीजी ने छात्र के जिन गुणों का उल्लेख किया है अगर उसका कुछ भाग आज के छात्रों में आ जाय तो वह उच्च कोटि का प्रतिभाशाली छात्र होगा। आज का आध्यात्मिक छात्र इन विशेषताओं से युक्त होंगे, परन्तु लौकिक वर्ग का छात्र इन विशेषताओं से युक्त नहीं होंगे, क्योकि आज के छात्र दूसरों के ज्ञान को बिना समझे (रट लेते हैं) निगल जाते हैं और परीक्षाकाल में उन्हें उगल देते हैं और परीक्षा बाद भूल जाते हैं स्वामी जी इसका दोष छात्रों पर देते हैं परन्तु मेरी राय में इसके लिए वर्तमान शिक्षा व्यवस्था दोषी हैं, छात्र कम।

सन्दर्भ

1. डॉ0 अस्थाना गीता एवं पाण्डा अनिल कुमार (2009) 'साहित्य रत्नालय कानपुर" पेज नं0 234–239
2. डॉ0 त्रिपाठी नरेष चन्द्र एवं डॉ0 ला बिहारी विष्वनाथ (2012) 'अग्रवाल पब्लिकेषन्स, आगरा" पेज नं0 5'9
3. डॉ0 पाण्डेय रामसकल (2008) ' विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा" पेज नं0 299–301
4. विवेकानन्द स्वामी (2013) 'रामकृष्ण मठ, नागपुर" पेज नं0 6–7
5. विवेकानन्द स्वामी (2012) 'आकांक्षा प्रकाशन, दिल्ली' पेज नं0 58–60
6. विवेकानन्द स्वामी (2013) 'रामकृष्ण मठ, नागपुर' पेज नं0 44–47
7. राधाकृष्णन उपनिषदों की भूमिका, राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली, तृतीय संस्करण, 1976, पृष्ठ 54
8. गुप्त, राजेन्द्र प्रसाद (1997) "स्वामी विवेकानंदः व्यक्ति और विचार" प्रकाशन –राधा पब्लिकेशन 4378/4 अंसारी रोड, दरियागंज नई दिल्ली–110002 प्रसंस्करण
9. स्वामी, व्योमरूपानन्द "विवेकानंद संचयन" रामकृष्ण मठ नागपुर
10. www eric.ed.gov
11. www.dartmouth.edu
12. www.enwikipedia.org/ wiki
13. www.google.co.in